

[2023] 6 एस. सी. आर. 669

ए.

आमोद कुमार कांत बनाम।

उपहार त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

(2017 की आपराधिक अपील संख्या 1359) अप्रैल 20, 2023

बी.

[के. एम. जोसेफ, बी. वी. नागरत्ना और अरविंद कुमार, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -s.197-एम्बिट ऑफ-उपहार त्रासदी मामला-अपीलार्थी के खिलाफ सीबीआई द्वारा दायर समापन रिपोर्ट को मजिस्ट्रेट द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिन्होंने इसके बजाय पहले प्रत्यर्थी द्वारा दायर विरोध याचिका पर संज्ञान लिया और अपीलार्थी के खिलाफ समन जारी किया-यू/एस अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया था।³⁰⁴ ए, ^{337,338}, आईपीसी और यू/एस।¹⁴, सिनेमेटोग्राफ अधिनियम आर/डब्ल्यू नियम-अपीलार्थी ने यू/एस के तहत याचिका दायर की।⁴⁸², अपील पर समन जारी करने के आदेश को चुनौती देते हुए सी. आर. पी. सी. ने कहा: मंजूरी के अभाव में संज्ञान लेने के प्रश्न पर विचार करते समय और इस प्रकार एस।¹⁹⁷ इसका उल्लंघन किया जाना इस सवाल के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए कि क्या कोई अपराध किया गया है-एस के पीछे का हितकारी उद्देश्य।¹⁹⁷ क्या लोक सेवकों को संरक्षण दिया जा रहा है-सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जो न्यायालय द्वारा इस तर्क से निपटने के दौरान उठाया और उत्तर दिया जाना चाहिए कि मंजूरी आने वाली नहीं है, वह यह है कि क्या अधिकारी अपने आधिकारिक कर्तव्यों का प्रयोग कर रहा था-यहां तक कि एक अधिकारी जो अपनी आधिकारिक शक्ति के कथित प्रयोग में कार्य करता है, उसे यू/एस सुरक्षा दी जाती है। ¹⁹⁷- वर्तमान मामले में, स्वीकार किए गए तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थी अपने आधिकारिक कार्यों के निर्वहन में कार्य नहीं कर रहा था-इस प्रश्न के बीच सूक्ष्म और सूक्ष्म अंतर कि क्या अपराध किया गया है और यदि कोई अपराध किया गया है, तो क्या एक लोक सेवक, जिस पर ऐसा करने का आरोप है, पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी की आवश्यकता है, इस पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए-मजिस्ट्रेट और उच्च न्यायालय ने इस अंतर की अनदेखी की-मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी के खिलाफ संज्ञान लेने में गलती की, जो एस की मांगों के विपरीत है।¹⁹⁷ -विवादित आदेश को अपास्त करना गया-कार्यवाही को एस में चुनौती दी गई।⁴⁸² दंड संहिता, 1860-एस. एस. को रद्द कर दिया गया।³⁰⁴ ए, ^{337,338}-सिनेमेटोग्राफ अधिनियम, 1952 -एस. 14.

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

669

670 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 6 एस. सी. आर.

ए.

डी. देवराज बनाम ओवैस साबिर हुसैन **(2020) 7 एससीसी**

695 :[2020] 6 एस. सी. आर. 453; इंद्र देवी बनाम राज्य

राजस्थान और एक अन्य (2021) 8 एस. सी. सी. 768; हरियाणा राज्य और अन्य बनाम
भजन लाल और अन्य 1992

सपं. (1) एस. सी. सी. 335:[1990] 3 पूरकाएस. सी. आर. 259; सतपाल

सिंह खैरा बनाम पंजाब राज्य **(2023) 1 एससीसी 289**; अब्दुल वहाब अंसारी बनाम
बिहार राज्य, **(2000) 8 एससीसी**

बी.

500 :[2000] 3 पूरकाएस. सी. आर. 747; सुरिंदरजीत सिंह मंड बनाम पंजाब राज्य,
(2016) 8 एस. सी. सी. 722:[2016] 5 एससीआर

653; देविंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य, **(2016) 12 एससीसी 87:[2016] 6 एस.
सी. आर. 295**; सुशील अंसल बनाम राज्य

सीबीआई 2014 (6) एससीसी 173:[2014] 9 एससीआर 571; शांताबेन

सी.

भूराभाई भूरिया बनाम आनंद अताभाई चौधरी और

अन्य 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एससी 974; एम. सी. डी. बनाम उपहार त्रासदी
पीड़ित संघ। (2011) 14 एससीसी 481:[2011] 16 एस. सी. आर. 1-संदर्भित।

संदर्भित निर्णय

डी.

[2020] 6 एससीआर 453

संदर्भित किया गया है

पैरा 5

[1990] 3 पूरक।एस. सी. आर. 259 पैरा 7 [2000] 3 सप्लीमेंट को संदर्भित करता है।एस. सी. आर. 747 पैरा 13 [2016] 5 एस. सी. आर. 653 पैरा 14 [2016] 6 एस. सी. आर. 295 पैरा 15 [2014] 9 एस. सी. आर. 571 पैरा 16,29 [2011] 16 एस. सी. आर. 1

ई.

संदर्भित किया गया है

पैरा 32

एफ.

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय:2017 की आपराधिक अपील No.1359।

2010 के सी. आर. एल. एम. No.2746 में नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांकित 03.10.2013 के निर्णय और आदेश से।

आर. बसंत, मथाई एम. पैकाडे, वरिष्ठ अधिवक्तागण , सुश्री लिज मैथ्यू, सुश्री बीजी राजेश, ए. के. सिंह, सुश्री मोहिनी प्रिया, अक्षय सहाय, सुश्री मल्लिका अग्रवाल, सुश्री वसुधा जैन, सुदर्शन सिंह रावत, सज्जन सिंह नाहर, संजय जैन, अधिवक्तागण अपीलार्थी के लिए।

जी.

तुषार मेहता, सॉलिसिटर जनरल, के. एम. नटराज, ए. एस. जी., के. टी. एस. तुलसी, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुकांत विक्रम, आदित्य प्रताप सिंह, श्रीमती पल्लवी मल्होत्रा, ए.

एच.

671

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

अविश भाटी, टी. ए. खान, बी. के. सतीजा, सुश्री स्वाति घिल्डियाल, शांतनु शर्मा, शरत नांबियार, अरविंद कुमार शर्मा, मुकेश कुमार मरोरिया, श्रीकांत नीलप्पा तेरदल, शैलेश मडियाल, वीर विक्रांत सिंह, इंदिरा भाकर, डॉ. एन. विशाखमूर्ति, अधिवक्तागण उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय दिया गया:

बी.

(1) विवादित आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के तहत अपीलार्थी द्वारा दायर याचिका को खारिज कर दिया है (इसके बाद संक्षिप्तता के लिए 'Cr.P.C' के रूप में संदर्भित)। धारा 482 Cr.P.C के तहत याचिका अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश के खिलाफ दायर की गई थी, जिसमें केंद्रीय जांच ब्यूरो (इसके बाद संक्षेप में 'सीबीआई' के रूप में संदर्भित) द्वारा दायर समापन रिपोर्ट को खारिज कर दिया गया था, जिसे अपीलार्थी के खिलाफ दायर किया गया था। सी. बी. आई. द्वारा दायर समापन रिपोर्ट को मजिस्ट्रेट द्वारा स्वीकार नहीं किया गया, जिन्होंने इसके बजाय हमारे समक्ष पहले प्रत्यर्थी (उपहार त्रासदी के पीड़ितों का संगठन) द्वारा दायर विरोध याचिका पर संज्ञान लिया। जैसा कि विद्वान न्यायाधीश ने 13.06.1997 पर विवादित फैसले में उल्लेख विद्वान है, उपहार थिएटर की बालकनी में बैठकर फिल्म देखते समय 59 लोगों की जान चली गई और 100 से अधिक लोग गंभीर रूप से घायल हो गए। इस दुर्भाग्यपूर्ण और दुखद घटना के कारण 16 अभियुक्तों के खिलाफ आपराधिक मुकदमा चलाया गया। जब मुकदमा चल रहा था, अन्य बातों के साथ-साथ वर्तमान अपीलार्थी के खिलाफ धारा 319 Cr.P.C के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। यह विवाद में नहीं है कि उस पर तुरंत कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। 16 अभियुक्तों के खिलाफ मुकदमा दिनांकित 23.11.2007 के फैसले में समाप्त हुआ। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने सत्र मामला सं. 13/07 का निपटारा करते हुए सीबीआई को Cr.P.C की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच करने का आदेश दिया। विद्वान सत्र न्यायाधीश, निस्संदेह, उन अभियुक्तों को खोजने के लिए आगे बढ़े जिन्हें सत्र मामला सं. 13/2007 में विभिन्न आरोपों में दोषी ठहराया गया था। यह पता लगाने और उनके खिलाफ उचित सजा देने के बाद ही 23.11.2007 के फैसले के माध्यम से आगे की जांच का आदेश दिया गया था। सी. बी. आई. ने जाँच के बाद 05.03.2009 पर एक समापन रिपोर्ट दायर की। इसमें कहा गया है कि उन लोगों के अलावा किसी अन्य अधिकारी के खिलाफ कोई आपराधिक कार्य नहीं पाया गया, जिनके खिलाफ पहले आरोप पत्र दायर किया गया था। इसके बाद पहले प्रत्यर्थी ने दिनांक 13.05.2009 पर विरोध याचिका दायर की। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, समापन रिपोर्ट को अस्वीकार करते हुए लेकिन विरोध याचिका में शिकायत को स्वीकार करते हुए मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी के खिलाफ समन जारी किया। भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304 ए, 337, 338 और भारतीय दंड संहिता की धारा 14 के तहत अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया है।

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

सिनेमेटोग्राफ अधिनियम, 1952 को नियमों के सहपठित पढ़ा गया। यह समन जारी करने का आदेश है जो Cr.P.C की धारा 482 के तहत कार्यवाही का विषय था और जो अंततः विवादित आदेश में समाप्त हो गया है।

(2) हमने अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. बसंत को सुना है। हमने अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री के. एम. नटराज को भी विद्वान है, जो अतिरिक्त प्रत्यर्थी अर्थात् दिल्ली पुलिस की ओर से पेश होते हैं। इसके अलावा, हमने श्रीमती को भी सुना है। अपराजित, सी. बी. आई. की ओर से पेश वरिष्ठ वकील हैं। हमने आगे श्री के. टी. एस. तुलसी, विद्वान वरिष्ठ वकील को सुना जो पहले प्रत्यर्थी की ओर से पेश होते हैं।

बी.

सी.

(3) श्री बसंत, अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील अनिवार्य रूप से हमारे सामने तीन दलीलों को संबोधित करेंगे। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, वह तर्क देंगे कि मजिस्ट्रेट के संज्ञान लेने और समन जारी करने के आदेश को बरकरार रखने वाला विवादित आदेश एक लाइलाज अवैधता से ग्रस्त है। अवैधता दोनों न्यायालयों में शामिल है जो Cr.P.C की धारा 197 में अनिवार्य आदेश की अनदेखी करते हैं। दूसरे शब्दों में, अपीलार्थी के खिलाफ धारा 197 के दायरे में समझे गए अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया है। बिना मंजूरी मांगे और प्राप्त किए, जैसा कि धारा 197 के तहत विचार किया गया है। मजिस्ट्रेट इस तरह के संज्ञान के खिलाफ स्पष्ट बार के दांतों में संज्ञान लेने के लिए आगे बढ़े हैं। वह प्रस्तुत करेगा कि इस छोटे से बिंदु पर विवादित आदेश को नष्ट होना चाहिए।

डी.

ई.

(4) वह तथ्यों के बारे में विस्तार से बताएगा और प्रस्तुत करेगा कि निम्नलिखित रूप में क्या हुआ। वर्ष 1976 में दिल्ली के उपराज्यपाल ने सिनेमा टिकटों की कीमत कम करने का निर्णय लिया था। यह ध्यान में रखते हुए कि इस निर्णय से थिएटर मालिकों को वित्तीय नुकसान होगा, सिनेमाघरों में अधिक सीटें लगाने की अनुमति देने का निर्णय लिया गया ताकि इसके तहत अर्जित राजस्व से सिनेमा टिकटों की कीमत में कमी से होने वाले नुकसान की भरपाई की जा सके। 1976 में लिए गए उक्त निर्णय के बल पर, दिल्ली के सिनेमाघरों में अधिक सीटें थीं। अपीलार्थी ने 02.02.1979 पर पुलिस उपायुक्त के रूप में पदभार संभाला। डी. सी. पी. के रूप में, उन्हें सिनेमेटोग्राफ अधिनियम, 1952 और नियमों के तहत एक लाइसेंस अधिकारी के कर्तव्यों को भी सौंपा गया। वह इस

आधिकारिक पद पर 26.05.1980 तक बने रहे।उपराज्यपाल द्वारा नीति में बदलाव लाया गया था। सीट बढ़ाने के लिए वर्ष 1976 में लिए गए पहले के निर्णय को रद्द कर दिया गया था।यह किया गया था ए

एफ.

जी.

एच.

673

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

27.07.1979 पर।विद्वान वरिष्ठ वकील के अनुसार, अपीलार्थी ने सिनेमा थिएटरों को अतिरिक्त सीटों को हटाने और 04.08.1979 द्वारा अनुपालन की रिपोर्ट करने का आदेश जारी विद्वान , जिसमें विफल रहने पर उनके लाइसेंस निलंबित कर दिए जाएंगे।उपराज्यपाल द्वारा जारी अधिसूचना दिनांक 1 और अपीलार्थी द्वारा दिनांक 2 पारित आदेश दिल्ली उच्च न्यायालय में रिट याचिकाओं के एक समूह में विवादित हो गए।दिल्ली उच्च न्यायालय ने मालिकों को सुरक्षा प्रदान करते हुए एक अंतरिम आदेश पारित किया, जिसमें अतिरिक्त सीटों को हटाने के निर्देश को स्थगित कर दिया गया था, लेकिन उन्हें अतिरिक्त सीटों के संबंध में टिकट जारी करने से मना कर दिया गया था।05.10.1979 पर एक संयुक्त निरीक्षण किया गया।संयुक्त निरीक्षण ने अतिरिक्त सीटों को पूरी तरह से हटाने की सिफारिश की।22.10.1979 पर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक जवाबी हलफनामा दायर किया।इसमें यह बताया गया है कि अपीलार्थी ने रिट याचिकाकर्ताओं की याचिका का कड़ा विरोध किया कि अतिरिक्त सीटों को संरक्षित करने की अनुमति दी जा सकती है। 29.11.1979 पर, यह बताया गया है कि उच्च न्यायालय ने संयुक्त निरीक्षण दल की रिपोर्ट को खारिज कर दिया।उच्च न्यायालय को भी जवाबी हलफनामे में अपीलार्थी द्वारा लिए गए रुख का समर्थन नहीं मिला।उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 1 के निर्णय द्वारा, संक्षेप में, अपीलार्थी को मामले को देखने और यह पता लगाने का निर्देश दिया कि क्या सीटों को उनके पर्याप्त और बहुत कठोर और लचीले अनुपालन पर जारी रखा जा सकता है।थिएटर मालिकों को 06.12.1979 पर कारण बताएँ नोटिस जारी किए गए थे।19.12.1979 पर, कार्यकारी अभियंता (पीडब्ल्यूडी), मुख्य अग्निशमन अधिकारी और सहायक पुलिस आयुक्त (लाइसेंसिंग) द्वारा संयुक्त निरीक्षण किया गया था।थिएटर मालिकों को सुनवाई का मौका दिया गया।इसमें उपहार थिएटर के मालिक भी शामिल थे।यह 20.12.1979 पर हुआ।इसके बाद, यह है कि 24.12.1979 पर, अपीलार्थी के अनुसार, समिति की सिफारिशों पर, अपीलार्थी ने उपहार थिएटर की बालकनी में 06 सीटों और बाकी मंजिल में 56 सीटों को हटाने का आदेश दिया।इसका मतलब है कि 1976 में जारी अधिसूचना के बल पर कुल 100 सीटों में से कुल 62 अतिरिक्त सीटों को हटाने का आदेश दिया गया था। अपीलार्थी द्वारा यह कहा गया है कि बाद में वार्षिक निरीक्षण किए गए थे।अपीलार्थी का स्थानांतरण हो गया और उसने 26.05.1980 पर पद खाली कर दिया।एक अन्य निरीक्षण किया

गया था जो दिल्ली पुलिस की लाइसेंस शाखा से युक्त एक संयुक्त निरीक्षण दल द्वारा 09.06.1983 और 17.06.1983 पर किया गया था। दिल्ली नगर निगम और दिल्ली अग्निशमन सेवा भी इस दल का हिस्सा थे। बड़े पैमाने पर सुरक्षा उल्लंघन पाए गए। उपहार थिएटर का लाइसेंस 27.06.1983 पर निलंबित कर दिया गया।

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

674

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

1980-1997 से, यह बताया गया है कि विचाराधीन थिएटर का हर साल निरीक्षण किया जाता था। विचाराधीन थिएटर के खिलाफ पारित निलंबन आदेश दो रिट याचिकाओं में चुनौती का विषय था और निलंबन को स्थगित कर दिया गया था। थिएटर का संचालन जारी रहा। आई. डी. 1 पर आई. डी. 2 के आदेश के लगभग 17 साल बाद आग लग गई थी, जिसमें दुर्भाग्य से 59 लोगों की मौत हो गई थी और कई अन्य घायल हो गए थे। इसलिए, वह यह इंगित करेंगे कि, सबसे अच्छा या सबसे बुरा, अपीलार्थी के खिलाफ जो पेश किया जा सकता है वह इसे धारा 197 के दायरे से बाहर नहीं ले सकता है। दूसरे शब्दों में, यह सब होने के बावजूद यह नहीं कहा जा सकता है कि वह अपने कार्यालय से आने वाली शक्ति का प्रयोग नहीं कर रहे थे। उन्होंने अपने आधिकारिक कार्यों के निर्वहन में जो कुछ भी किया वह किया। धारा 197 किसी व्यक्ति को प्रतिरक्षित करती है यदि उसका कार्य अपनी आधिकारिक शक्ति का प्रयोग कर रहा है। जिस भी तरह से कोई इसे देखता है, जो कुछ भी उसने किया है, या यदि कोई अधिकता है, भले ही लापरवाही हुई हो, वह Cr.P.C की धारा 197 द्वारा प्रदान किए गए संरक्षण का कानूनी रूप से हकदार होगा। न्यायालयों ने Cr.P.C की धारा 197 में निहित इस हितकारी सिद्धांत की अनदेखी की है। Cr.P.C की धारा 197 द्वारा निहित सिद्धांत का उद्देश्य लोक सेवकों की रक्षा करना है। यह इस सवाल के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए कि क्या कोई अपराध किया गया है। कानून यह आदेश देता है कि एक बार जब वह व्यक्ति जिसके खिलाफ संज्ञान लिया जाता है, वह आईडी 1 की धारा 197 के अर्थ के भीतर एक सार्वजनिक पद धारण कर

रहा था और उसके लिए जिम्मेदार कार्य या चूक उसके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में या उसके आधिकारिक कर्तव्यों के कथित प्रयोग में की जाती है, तो संबंधित न्यायिक अधिकारी के लिए मंजूरी के अभाव में संज्ञान लेकर उसके खिलाफ कानून को आगे बढ़ाना पूरी तरह से अवैध होगा। न्यायालय के समक्ष मामले के तथ्यों में, वह प्रस्तुत करेंगे कि यह स्पष्ट था कि उन्होंने जो कुछ भी किया या नहीं किया, वह उनके आधिकारिक कार्यों के निर्वहन के भीतर उत्पन्न हुआ। इस संबंध में, उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों से प्रेरणा ली:

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

(5) डी. देवराज बनाम ओवैस साबिर हुसैन (2020) 7 एससीसी

695, उन्होंने निम्नलिखित बातों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया: “71. यदि पुलिसकर्मी के खिलाफ कथित रूप से दर्ज की गई शिकायत में आरोप लगाया गया कार्य किसी आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन से युक्तियुक्त रूप से जुड़ा हुआ है, तो इसका संज्ञान तब तक नहीं लिया जा सकता जब तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 और/या कर्नाटक पुलिस अधिनियम की धारा 170 के तहत उपयुक्त सरकार की आवश्यक मंजूरी प्राप्त नहीं की जाती है।

जी.

एच.

675

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

ए.

74. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि न्यायालय प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत एक आवेदन उन कार्यवाही को रद्द करने के लिए बनाए रखा जा सकता है जो मंजूरी के अभाव, तुच्छ या अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग के लिए खराब हैं। यदि, शिकायत के सामने, कथित कार्य का आधिकारिक कर्तव्य के साथ एक उचित संबंध प्रतीत होता है, जहां आपराधिक कार्यवाही स्पष्ट रूप से दुर्भावना से प्रेरित होती है और गलत उद्देश्य से शुरू की जाती है, तो अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए न्यायालय प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति का उपयोग कार्यवाही को रद्द करने के लिए करना होगा।”

बी.

(6) इसके बाद, उन्होंने हमारा ध्यान इंद्र देवी बनाम राजस्थान राज्य और एक अन्य (2021) 8 एस. सी. सी. 768 पर निम्नलिखित पैराग्राफ की ओर आकर्षित किया: “10. हमने पक्षों के लिए विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुतियों पर अपना विचार दिया है। सी. आर. पी. सी. की धारा 197 एक अधिकारी को अनावश्यक उत्पीड़न से बचाने का प्रयास करती है, जिस पर अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के उद्देश्य से किए गए अपराध का आरोप है और इस प्रकार, न्यायालय को सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के अलावा ऐसे अपराध का संज्ञान लेने से रोकती है। लोक सेवकों को दुर्भावनापूर्ण या परेशान करने वाले अभियोजन से बचाने के लिए उन्हें एक विशेष श्रेणी के रूप में माना गया है। साथ ही, ढाल भ्रष्ट अधिकारियों की रक्षा नहीं कर सकती है और प्रावधानों को इस तरह से समझा जाना चाहिए कि ईमानदारी, न्याय और भलाई के उद्देश्य को आगे बढ़ाया जा सके।

सी.

डी.

ई.

शासन। (देखें सुब्रमण्यम स्वामी बनाम मनमोहन सिंह [सुब्रमण्यम स्वामी बनाम मनमोहन सिंह, (2012) 3

एससीसी 64:(2012) 1 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 1041:(2012) 2 एस. सी. सी. (एल एंड एस) 666]।) धोखाधड़ी, अभिलेखों के निर्माण या गबन में अधिकारियों की कथित संलिप्तता को उनके आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में नहीं कहा जा सकता है। हालांकि, इस तरह की मंजूरी तब आवश्यक है जब लोक सेवक के खिलाफ कथित अपराध उसके द्वारा "अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के लिए किया गया है" और यह पता लगाने के लिए कि क्या कथित अपराध "अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के लिए किया गया है", पालन किया जाने वाला मानदंड प्रथम दृष्टया यह दृष्टिकोण तैयार करना है कि क्या जिस चूक के लिए आरोपी पर आरोप लगाया गया था, उसका आरोप के निर्वहन के साथ उचित संबंध था।

एफ.

जी.

उनके कर्तव्य। (महाराष्ट्र राज्य बनाम बुधिकोटा सुब्बाराव [महाराष्ट्र राज्य बनाम बुधिकोटा सुब्बाराव,

(1993) 3 एससीसी 339:1993 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 901]। असली सवाल,

एच.

ए.

इसलिए, यह है कि क्या किया गया कार्य सीधे आधिकारिक कर्तव्य से संबंधित है।

11. हमें उपरोक्त परीक्षण को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करना होगा। उस ओर से, प्रत्यर्थी 2 का एफ. आई. आर. में नाम नहीं लिया जाना बहुत महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि कथित भूमिका बाद में सामने आई। हालाँकि, जो महत्वपूर्ण है वह कथित उल्लंघन यानी अपने वरिष्ठों के साथ साजिश रचने में उसे सौंपी गई भूमिका है। इससे जो पता चलता है वह यह है कि जहां तक कागजातों के प्रसंस्करण का संबंध है, कार्यकारी अधिकारी सुरेंद्र कुमार माथुर ने अपने प्रारंभिक अक्षरों को संबंधित कागजातों में डाल दिया था जो उनके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में रखे गए थे। इतना ही नहीं, कथित लेन-देन का हिस्सा रहे संदीप माथुर को भी इसी तरह सुरक्षा प्रदान की गई थी। प्रत्यर्थी 2 को जो कार्य सौंपा गया था, वह आवंटन, नियमितीकरण, कृषि भूमि के रूपांतरण के विषय से संबंधित था और उसके कार्य क्षेत्र में आता था। मेघाराम के आवेदन की प्रक्रिया में, फाइल को शुरू में कार्यकारी अधिकारी के पास रखा गया था, जिन्होंने निरीक्षण का निर्देश दिया था और निरीक्षण कनिष्ठ अभियंता द्वारा किया गया था और उसके बाद ही नगर आयुक्त ने फाइल पर हस्ताक्षर किए। परिणाम यह है कि फाइल से निपटने वाले वरिष्ठ अधिकारियों को सुरक्षा प्रदान की गई है, जबकि क्लर्क, जिसने कागजी कार्य किया था, यानी प्रत्यर्थी 2 को निचली विचारण न्यायालय द्वारा इसी तरह के संरक्षण से इनकार कर दिया गया है, भले ही आरोप वास्तव में अपने वरिष्ठ अधिकारियों के साथ साजिश करने का है। न तो राज्य ने और न ही शिकायतकर्ता ने इन दो अन्य अधिकारियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत दिए गए संरक्षण के खिलाफ अपील की।

बी.

सी.

डी.

ई.

12. इस प्रकार, हम यह समझने में सक्षम नहीं हैं कि प्रत्यर्थी 2 को ऐसा ही संरक्षण क्यों नहीं दिया जाना चाहिए जैसा कि अन्य दो अधिकारियों के मामले में क्रमशः निचली विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा किया गया था। संज्ञान लेने के लिए सक्षम प्राधिकारी से मंजूरी की आवश्यकता होगी और किसी भी अधिकारी के संबंध में कोई मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी। इसे ध्यान में रखते हुए कि अन्य दो अधिकारियों के संबंध में कार्यवाही को रद्द कर दिया गया था और वर्तमान मामले में भी उच्च न्यायालय ने यही निर्देश दिया है।” (7) इसके बाद, अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील का तर्क होगा कि न्यायालय को मामले के तथ्यों से भी अनजान नहीं होना चाहिए। अपीलार्थी के कार्यों या

चूक का पता वर्ष 1979-1980 तक लगाया जा सकता है। विचाराधीन घटना 17 साल बाद हुई।
वार्षिक ए

एफ.

जी.

एच.

677

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

निरीक्षण किए गए। अन्य अधिकारियों के पास निरीक्षण की शक्तियां हैं और वे समय-समय पर इसका प्रयोग करते हैं। उपहार थिएटर के अलावा कई थिएटरों में अतिरिक्त सीटें थीं। यह केवल इस दुर्भाग्यपूर्ण मामले में है कि 1997 में आग लगने से पूरी कार्यवाही हुई है। वह प्रस्तुत करेगा कि हरियाणा राज्य और अन्य बनाम भजन लाल में सिद्धांत का पालन करना

और अन्य 1992 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 335, यह एक उपयुक्त मामला है जहां कथित कृत्यों और चूक के साथ कोई आपराधिकता नहीं जोड़ी जा सकती है।

बी.

(8) तीसरा, वह यह भी प्रस्तुत करेगा कि, जैसा कि ऊपर इस कथन में देखा गया है, हालांकि Cr.P.C की धारा 319 के तहत कार्रवाई करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। मूल आरोपी के खिलाफ मुकदमा लंबित होने तक, उस पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। इसे न्यायालय का अंतिम ध्यान तभी मिला जब मूल अभियुक्त को दोषी ठहराते हुए निर्णय के माध्यम से मामले का अंत में निपटारा किया गया।

सी.

(9) न्यायालय, वे इंगित करेंगे, मुकदमा समाप्त होने और फैसला सुनाए जाने के बाद धारा 173 (8) के तहत जांच का निर्देश देकर कानून की आवश्यकता से अलग हो गई। उनके अनुसार, यह कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं है। उन्होंने हमारा ध्यान सुखपाल सिंह खैरा बनाम पंजाब राज्य (2023) 1 एस. सी. सी. 289 की ओर आकर्षित किया:

डी.

“39.(I) क्या निचली विचारण न्यायालय के पास धारा 319 सी. आर. पी. सी. के तहत अतिरिक्त अभियुक्त को बुलाने की शक्ति है जब अन्य सह-अभियुक्तों के संबंध में मुकदमा समाप्त हो गया है और समन आदेश देने से पहले उसी तारीख को दोषसिद्धि का निर्णय दिया गया है?

ई.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के तहत शक्ति का उपयोग सजा के आदेश की घोषणा से पहले किया जाना है, जहां आरोपी को दोषी ठहराने का निर्णय होता है। बरी होने के मामले में, बरी होने का आदेश घोषित होने से पहले शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसलिए, समन आदेश को दोषसिद्धि के मामले में सजा के अधिरोपण द्वारा मुकदमे के समापन से पहले होना चाहिए। यदि आदेश उसी दिन पारित किया जाता है, तो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर इसकी जांच करनी होगी और यदि ऐसा समन आदेश दोषसिद्धि के मामले में बरी होने या सजा देने के आदेश के बाद पारित किया जाता है, तो यह स्थायी नहीं होगा।”

एफ.

जी.

(10) वह इस पहलू पर विचार करने के लिए भी दबाव डालते हैं कि अपीलार्थी एक त्रुटिहीन ट्रैक रिकॉर्ड के साथ एक अत्यधिक सम्मानित अधिकारी है।

एच.

678

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

(11) श्री के. एम. नटराज, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, जो अतिरिक्त प्रतिवादी-दिल्ली पुलिस की ओर से पेश होते हैं, प्रस्तुत करेंगे कि दिल्ली पुलिस वह प्राधिकरण है जो Cr.P.C की धारा 197 के तहत अभियोजन को मंजूरी देता है।

(12) श्री के. एम. नटराज प्रस्तुत करेंगे कि Cr.P.C की धारा 197 के अर्थ के भीतर एक लोक सेवक के खिलाफ संज्ञान लेने के लिए यह अपरिहार्य है कि मंजूरी देने वाला प्राधिकरण मंजूरी देता है। इस संबंध में वह अपीलार्थी द्वारा लिए गए तर्क का समर्थन करने के लिए हमारे सामने उपस्थित होंगे। वह निम्नलिखित मामले कानून से भी सुदृढ़ीकरण की मांग करता है:

बी.

(13) उन्होंने हमारा ध्यान अब्दुल वहाब अंसारी बनाम राज्य की ओर आकर्षित किया।

बिहार, (2000) 8 एस. सी. सी. 500 जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया: 7. सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी अपराध का संज्ञान लेने में न्यायालय के लिए एक पूर्व शर्त है, यदि अभियुक्त द्वारा किए गए अपराध को उसके आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में एक कार्य कहा जा सकता है, तो प्रश्न संज्ञान लेने के मामले में मजिस्ट्रेट के अधिकार क्षेत्र को छूता है और इसलिए, यह कोई आवश्यकता नहीं है कि एक अभियुक्त को आरोप तय होने तक ऐसी याचिका लेने के लिए इंतजार करना चाहिए।

सी.

डी.

सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम पांडे अजय

भूषण [(1998) 1 एस. सी. सी. 205:1998 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1] इसी तरह का तर्क श्री सिब्बल द्वारा प्रस्तुत विद्वान गया था, जो उस मामले में अपीलार्थियों की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ वकील थे। उस मामले में, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त के आवेदन पर निर्णय दिया था कि धारा 197 के प्रावधान आकर्षित होते हैं। इस तर्क को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने कहा था: (एस. सी. सी. पीपी. 217-18, पैरा 23)

ई.

“धारा 197 की उप-धारा (1) में निहित विधायी अधिदेश किसी न्यायालय को किसी अपराध का संज्ञान लेने से रोकता है, सिवाय उस मामले में संबंधित सरकार की पूर्व मंजूरी के, जिसमें शिकायत किए गए कार्य कथित रूप से किसी लोक सेवक द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में किए गए हैं या अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में होने का तात्पर्य है और ऐसे लोक सेवक को सरकार द्वारा या सरकार की मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है, न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को ही छूता है। यह कानून द्वारा लगाया गया एक निषेध है, जो अभियुक्त को जारी की जा रही प्रक्रिया पर न्यायालय के समक्ष पेश होने के बाद, एक आवेदन द्वारा यह दर्शाता है कि धारा 197 (1) केवल न्यायालय को ए.

एफ.

जी.

एच.

679

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

अपनी त्रुटि को सुधारें जहां अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया गया है जो उसके पास नहीं है। ऐसे मामले में अभियुक्त के लिए प्रासंगिक दस्तावेजों और सामग्रियों को प्रस्तुत करने पर कोई रोक नहीं होनी चाहिए जो वास्तव में स्वीकार्य हों, इस प्रश्न के निर्णय के लिए कि क्या वास्तव में धारा 197 का मामला में कोई आवेदन है। यह अब विवाद में नहीं है और इस न्यायालय द्वारा कई मामलों में संकेत दिया गया है कि मंजूरी के प्रश्न पर कार्यवाही के किसी भी चरण में विचार किया जा सकता है।” न्यायालय ने आगे कहा था: (एस. सी. सी. पी. 218-19, पैरा 24) “संहिता की धारा 197 के लागू होने और वैध मंजूरी के बिना संज्ञान लेने के लिए न्यायालय की अधिकारिता के परिणामी निष्कासन का सवाल आनुवंशिक रूप से आरोपी की याचिका से अलग है कि शिकायत में कथन अपराध नहीं बनाते हैं और इस तरह संज्ञान और/या आपराधिक कार्यवाही के आदेश को रद्द कर

दिया जाए।उपरोक्त परिसरों में हमारी यह सुविचारित राय है कि एक अभियुक्त को प्रासंगिक दस्तावेजी सामग्री प्रस्तुत करने से प्रतिबंधित नहीं किया जाता है, जिसे बिना किसी औपचारिक प्रमाण के कानूनी रूप से देखा जा सकता है, इस रुख के समर्थन में कि शिकायत किए गए कार्य उसके अधिकार क्षेत्र या एक लोक सेवक के रूप में अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कथित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए किए गए थे, जिससे उपयुक्त प्राधिकारी की मंजूरी की आवश्यकता होती है।”

बी.

सी.

डी.

ई.

9. दूसरे प्रश्न पर आते हुए, यह अब माताजोग डोबे न्यायालय एच. सी. भारी [ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 44:(1955) 2 एस. सी. आर. 925] कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी देने के मामले में अभियुक्त द्वारा किए गए कथित अपराध का आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन से कुछ लेना-देना होना चाहिए, या किसी तरह से संबंधित होना चाहिए।दूसरे शब्दों में, कार्य और आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के बीच एक उचित संबंध होना चाहिए; कार्य का कर्तव्य के साथ ऐसा संबंध होना चाहिए कि अभियुक्त एक उचित दावा कर सके, लेकिन एक ढोंग या काल्पनिक दावा नहीं, कि उसने इसे अपने कर्तव्य के प्रदर्शन के दौरान किया था।उक्त मामले में आगे यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जहां कोई शक्ति प्रदान की गई है या कानून द्वारा या अन्यथा अधिरोपित कर्तव्य है, और ऐसा कुछ भी नहीं कहा गया है जो किसी भी सीमा या प्रतिबंधों द्वारा शक्ति के प्रयोग या कर्तव्य के प्रदर्शन को स्पष्ट रूप से बाधित करता है, तो यह अभिनिर्धारित करना उचित है कि

एफ.

जी.

एच.

680

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

यह अपने साथ ऐसे सभी कार्यों को करने या ऐसे साधनों को नियोजित करने की शक्ति रखता है जो ऐसे निष्पादन के लिए यथोचित रूप से आवश्यक हैं, क्योंकि यह एक नियम है कि जब कानून किसी

काम को करने का आदेश देता है, तो वह अपने आदेश को निष्पादित करने के लिए जो कुछ भी आवश्यक हो, उसके प्रदर्शन को अधिकृत करता है। यह निर्णय इसके बाद लिया गया

सुरेश कुमार भीकमचंद जैन मामले में न्यायालय [(1998) 1 एससीसी

बी.

205 :1998 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1] और इस न्यायालय के हाल के एक फैसले में

गौरी शंकर प्रसाद बनाम बिहार राज्य का मामला [(2000) 5

एससीसी 15:2000 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 872] न्यायालय ने कहा था कि उपरोक्त मामले में वर्तमान मामले के तथ्यों के लिए भी पूरी ताकत है क्योंकि उक्त मामले में कहा गया था: (एस. सी. सी. पी. 21, पैरा 14)

सी.

“[यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी सरकारी भूमि से अतिक्रमण हटाने के उद्देश्य से उप-मंडल मजिस्ट्रेट के रूप में अपनी आधिकारिक क्षमता में घटना स्थल पर मौजूद था और इस तरह के कर्तव्य का पालन करते हुए, उस पर उन कार्यों को करने का आरोप लगाया जाता है जो प्रत्यर्थी द्वारा दर्ज की गई शिकायत में निहित आरोपों की गंभीरता को दर्शाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में, यह अभिनिर्धारित किए बिना नहीं रखा जा सकता है कि अपीलार्थी के खिलाफ प्रत्यर्थी द्वारा शिकायत किए गए कार्यों का अपीलार्थी के आधिकारिक कर्तव्य के साथ उचित संबंध है। इसलिए, यह इस प्रकार है कि अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत प्रदान की गई मंजूरी के बिना आपराधिक कार्यवाही से प्रतिरक्षा का हकदार है।

डी.

ई.

हमारे लिए इस बिंदु पर अधिकारियों को गुणा करना आवश्यक नहीं है और उपरोक्त मामलों के अनुपात को ध्यान में रखते हुए और शिकायत में बताए गए वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू करते हुए, हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अपीलार्थी को उप-मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा पुलिस बल के साथ उपस्थित रहने और अतिक्रमण को हटाने का निर्देश दिया गया था और भीड़ को नियंत्रित करने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए, जब उसने गोली चलाने का निर्देश दिया था, तो यह माना जाना चाहिए कि गोली चलाने का आदेश उसे दी गई शक्ति और मजिस्ट्रेट के आदेशों के तहत उस पर लगाए गए कर्तव्य का प्रयोग था और इस मामले के दृष्टिकोण से धारा 197 (1) के प्रावधान इन तथ्यों पर लागू होते हैं। मान लीजिए कि कोई मंजूरी नहीं होने के कारण, मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया संज्ञान कानूनी रूप से गलत है और जब तक कि इसे अपीलार्थी के लिए रद्द नहीं किया जाता है, यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। तदनुसार, हम इस अपील ए को स्वीकार करते हैं।

एफ.

जी.

एच.

681

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

और जहां तक अपीलार्थी का संबंध है, आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर दें।

(14) उन्होंने न्यायालय के ध्यान में भी लाया, निर्णय में

सुरिंदरजीत सिंह मंड बनाम पंजाब राज्य, (2016) 8 एससीसी 722:

25. पूर्वगामी पैराग्राफ में देखी गई प्रस्तुतियों की निरंतरता में, प्रत्यर्थियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह दावा किया गया था कि संहिता की धारा 197 के तहत विचार किया गया अभियोजन और संज्ञान लेने में न्यायालय की कार्रवाई उन शिकायतों के आधार पर शुरू की गई कार्रवाई से संबंधित है जो किसी अपराध के होने का खुलासा करती हैं, या ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर, या पुलिस अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से जानकारी प्राप्त करने पर कि ऐसा अपराध किया गया था। यह दावा किया गया कि न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने की उपरोक्त कार्रवाई कथित "तथ्यों" पर आधारित है न कि न्यायालय द्वारा दर्ज "साक्ष्य" पर। उपरोक्त अंतर संहिता की धारा 190 का उल्लेख करके किया गया था, जो किसी अभियुक्त के खिलाफ कथित तथ्यों के आधार पर कार्रवाई शुरू करने पर विचार करती है, जबकि संहिता की धारा 319 के तहत संबंधित व्यक्ति के खिलाफ कार्रवाई केवल तभी शुरू की जाती है जब मुकदमे के दौरान दर्ज साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि उक्त व्यक्ति अपराध करने में शामिल था। संहिता की धारा 319 का संदर्भ देते हुए, प्रत्यर्थियों की ओर से यह प्रस्तुत किया गया था कि संहिता की धारा 319 के तहत लिया गया संज्ञान स्वयं न्यायालय द्वारा लिया गया था और इसलिए, वही "साक्ष्य" पर आधारित था, साथ ही, स्वयं न्यायालय की संतुष्टि कि ऐसे व्यक्ति पर "अन्य अभियुक्तों" के साथ मिलकर मुकदमा चलाने की आवश्यकता है, यह अनुचित लग रहा था कि संहिता की धारा 197 के तहत अभिनिर्धारित मंजूरी की अभी भी आवश्यकता होनी चाहिए। यह बताया गया कि संहिता की धारा 197 के तहत परिकल्पित संरक्षण एक पूर्व शर्त आवश्यकता नहीं थी जब संज्ञान स्वयं एक न्यायालय द्वारा "साक्ष्य" के मूल्यांकन पर आधारित था। विद्वान अधिवक्ता ने इस बात पर जोर दिया कि जब एक न्यायालय ने स्वयं यह निर्धारित किया था कि उसी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य के आधार पर संज्ञान लेने की आवश्यकता है, तो यह संबंधित न्यायालय के अधिकार को कम करने वाला होगा यदि उसके न्यायिक निर्धारण को संहिता की धारा 197 के तहत विचार किए गए अधिकारियों द्वारा लिए गए निर्णय के अधीन माना जाता है। ऊपर देखी गई प्रस्तुतियों के आधार पर, यह उत्तरदाताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता का जोरदार तर्क था कि धारा का अधिदेश

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

682

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

197 उन मामलों में विस्तार नहीं होगा जहां संहिता की धारा 319 के तहत संज्ञान लिया गया था।

(15) उन्होंने देविंदर के फैसले की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया।

सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2016) 12 एससीसी 87

“39. उपरोक्त निर्णयों से उभरने वाले सिद्धांतों का सारांश नीचे दिया गया है:

बी.

39.1. मंजूरी का संरक्षण एक ईमानदार और ईमानदार अधिकारी को ईमानदारी से और सार्वजनिक कर्तव्य को आगे बढ़ाने की अपनी क्षमता के अनुसार अपने कर्तव्य का पालन करने का आश्वासन है। हालाँकि, अधिकार को अपराध करने के लिए छिपाया नहीं जा सकता है।

सी.

39.2. एक बार जब लोक सेवक द्वारा अपने कर्तव्य के निर्वहन में कार्य या चूक पाई जाती है, तो इसे उदार और व्यापक रूप से बनाया जाना चाहिए जहां तक इसकी आधिकारिक प्रकृति का संबंध है। लोक सेवक आपराधिक गतिविधियों में लिस होने का हकदार नहीं है। उस हद तक सी. आर. पी. सी. की धारा 197 को संकीर्ण रूप से और प्रतिबंधित तरीके से समझा जाना चाहिए।

डी.

39.3. यहां तक कि किसी मामले के तथ्यों में भी जब लोक सेवक ने अपने कर्तव्य का उल्लंघन किया है, यदि कोई उचित संबंध है तो यह उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत सुरक्षा से वंचित नहीं करेगा। यह निर्धारित करने के लिए एक सार्वभौमिक नियम नहीं हो सकता है कि क्या किए गए कार्य और आधिकारिक कर्तव्य के बीच उचित संबंध है और न ही इस तरह के नियम को निर्धारित करना संभव है। 39.4. यदि हमला आंतरिक रूप से आधिकारिक कर्तव्यों के प्रदर्शन से जुड़ा हुआ है या संबंधित है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी आवश्यक होगी, लेकिन कर्तव्य

के साथ इस तरह के संबंध को ढोंग या काल्पनिक दावा नहीं होना चाहिए। अपराध को मंजूरी की आवश्यकता के लिए सीधे और उचित रूप से आधिकारिक कर्तव्य से जुड़ा होना चाहिए। अपराध करना आधिकारिक कर्तव्य का हिस्सा नहीं है। यदि अपराध बिना साबित किए अधूरा था, तो आधिकारिक अधिनियम, आमतौर पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के प्रावधान लागू होंगे।

ई.

एफ.

39.5. यदि मंजूरी आवश्यक है, तो इसे सक्षम प्राधिकारी द्वारा तय किया जाना चाहिए और मंजूरी ठोस वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन के आधार पर जारी की जानी चाहिए। न्यायालय को मंजूरी देने वाला प्राधिकरण नहीं होना चाहिए।

जी.

39.6. आम तौर पर, मंजूरी के प्रश्न को संज्ञान लेने के स्तर पर निपटा जाना चाहिए, लेकिन यदि संज्ञान लिया जाता है तो ए

एच.

683

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

गलती से और यह बाद के चरण में न्यायालय के ध्यान में आता है, उस प्रभाव का निष्कर्ष स्वीकार्य है और इस तरह की याचिका पहली बार अपीलिय न्यायालय के समक्ष ली जा सकती है। यह शुरुआत में ही उत्पन्न हो सकता है। इस बात की कोई आवश्यकता नहीं है कि अभियुक्त को आरोप तय होने तक इंतजार करना चाहिए।

39.7. आरोप तय करते समय मंजूरी का सवाल उठाया जा सकता है और इसका फैसला प्रथम दृष्टया आरोप के आधार पर किया जा सकता है। यह मुकदमे के समापन के बाद या अन्य उपयुक्त चरण में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आलोक में नए सिरे से निर्णय लेने के लिए खुला है।

बी.

39.8. कार्यवाही के किसी भी चरण में मंजूरी का सवाल उठ सकता है। पुलिस या न्यायिक जांच या मुकदमे के दौरान साक्ष्य के दौरान। मंजूरी आवश्यक है या नहीं, यह चरण दर चरण निर्धारित किया जा सकता है और प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर सामग्री को रिकॉर्ड पर लाया जा सकता है। मंजूरी के प्रश्न पर कार्यवाही के किसी भी चरण में विचार किया जा सकता है। मंजूरी की आवश्यकता मामले की प्रगति के क्रम में खुद को प्रकट कर सकती है और यह दिखाने के लिए कि उसका कर्तव्य क्या था, अभियुक्त के लिए मुकदमे के दौरान सामग्री प्रस्तुत करने के लिए खुला होगा। अभियुक्त को गुण-दोष के आधार पर अपने मामले के समर्थन में साक्ष्य देने का अधिकार है।

सी.

डी.

39.9.कुछ मामलों में बचाव पक्ष को साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना प्रभावी ढंग से और अंत में प्रश्न का निर्णय करना संभव नहीं हो सकता है। अच्छे विश्वास या बुरे विश्वास के सवाल का फैसला मुकदमे के समापन पर किया जा सकता है।

ई.

(16) श्रीमती. विद्वान -सी. बी. आई. की ओर से पेश वरिष्ठ वकील अपराजित ने हालांकि खुद को एक असहनीय स्थिति में पाया क्योंकि उनके मुवक्किल सी. बी. आई. ने जांच के बाद अपीलार्थी के खिलाफ कुछ नहीं पाया है, उन्होंने कहा कि उन्हें न्याय के हित में इस पद को छोड़ना होगा। उन्होंने इस स्थिति के लिए प्रचार किया कि अपीलार्थी का यह तर्क कि कोई मंजूरी नहीं है, उनके मामले को आगे नहीं बढ़ाएगा। वह प्रस्तुत करेगी कि निचली अदालत, अपील में उच्च न्यायालय और इसके अलावा, इस अदालत ने लाइसेंस देने वाले अधिकारियों के खिलाफ पाया है जिसमें अपीलार्थी भी शामिल है। उन्होंने हमें इस फैसले के माध्यम से ले लिया

एफ.

जी.

न्यायालय ने सुशील अंसल बनाम राज्य मामले में सी. बी. आई. 2014 (6) एस. सी. सी. 173 के माध्यम से रिपोर्ट दी।

वे इस प्रकार पढ़ते हैं: “134. इसके अलावा, एक बैठने की योजना, जो वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करती थी और डी. सी. आर., 1953 के तहत निर्धारित सुरक्षा आवश्यकताओं से समझौता करती थी, शायद ही इस विश्वास का समर्थन कर सकती थी कि

एच.

684

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

इस बात पर पूरा विश्वास है कि इस तरह की योजना वाली फिल्मों का प्रदर्शन कानूनी रूप से उचित था। यह विशेष रूप से तब है जब अधिसूचना दिनांक 1 को निरस्त करने के बाद उपहार को 100 और सीटों की अनुमति दी गई थी, जिसके बाद अतिरिक्त सीटों को हटाने की मांग की गई थी। ऐसा करने के बजाय कब्जाधारियों/मालिकों ने उस मांग पर हमला किया

इशरदास साहनी और ब्रदर्स।v. दिल्ली प्रशासन। [इशरदास साहनी और

बी.

ब्रदर्स।v. दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष दिल्ली प्रशासन, ए. आई. आर. 1980 डेल 147] जिसमें उच्च न्यायालय ने अधिकारियों को सिनेमेटोग्राफ अधिनियम के प्रावधानों के पर्याप्त अनुपालन के दृष्टिकोण से नए सिरे से देखने का निर्देश दिया। उच्च न्यायालय ने टिप्पणी की: (एयर पी।152, पैरा 11-12)

सी.

“11. प्रस्ताव 3: यह पहले ही स्पष्ट कर दिया गया है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य और आग के खतरे के पहलुओं पर विचार करने के बाद छूट दी गई थी। यह भी स्पष्ट है कि यह तथ्य कि इन मुख्य विचारों को ध्यान में रखते हुए छूट नहीं दी जा सकती, यह दर्शाता है कि नियमों के भीतर इन सिनेमाघरों में बैठने की जगह के विस्तार के लिए कुछ नियम थे, हालांकि कुछ अतिरिक्त सीटों का प्रावधान शायद कुछ हद तक नियमों के विपरीत रहा होगा। हमारे लिए इस सवाल पर अटकलें लगाने की जरूरत नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि छूट को रद्द करने का परिणाम केवल छूट को वापस लेना है। इसका स्वतः यह अर्थ नहीं है कि सिनेमाघरों में स्थापित सभी अतिरिक्त सीटें नियमों के विपरीत थीं और इसलिए, इस बात पर विचार किए बिना कि इनमें से कितनी सीटें नियमों के अनुरूप थीं और उनमें से कितनी सीटें नियमों के विपरीत थीं, उन्हें हटा दिया जाना चाहिए।

डी.

ई.

एफ.

12. इसलिए, प्रस्ताव 3 पर हमारा निष्कर्ष यह है कि प्रशासन अतिरिक्त सीटों पर अपना दिमाग लगाएगा ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि उनमें से किस ने किस नियम का और किस हद तक उल्लंघन किया है। वे इस बात को ध्यान में रखेंगे कि नियमों का अनुपालन पर्याप्त होना चाहिए और कठोर और कठोर नहीं होना चाहिए।”

जी.

यदि उपरोक्त निर्देश का पालन करते समय, संबंधित अधिकारियों ने डी. सी. आर., 1953 के तहत एक आवश्यक आवश्यकता के रूप में निर्धारित दाहिने तरफ के निकास और गैंगवे को बंद करने की अनदेखी करके नियमों की मौलिक आवश्यकता पर आंखें मूंद लीं, तो उन्होंने ए.

एच.

685

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

नियमों का उल्लंघन और इस प्रक्रिया में संरक्षकों की सुरक्षा खतरे में पड़ गई।

135. हम वर्तमान में इस सवाल की ओर रुख करेंगे कि क्या अधिसूचना के निरसन का प्रभाव सिनेमा के अधिभोगकर्ता/लाइसेंसधारी को सीटों को हटाने और मूल रूप से स्वीकृत गैंगवे और निकास को बहाल करने के लिए बाध्य करने का था। लेकिन हम इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते कि सिनेमा के अधिभोगियों/लाइसेंसधारियों ने अतिरिक्त सीटों को हटाने का विरोध किया था, भले ही रिट याचिका में प्रतिवादियों ने संरक्षकों की सुरक्षा के बारे में चिंता व्यक्त की थी यदि अतिरिक्त सीटों को नहीं हटाया गया था, जो हटाने से यह स्पष्ट है कि इसके परिणामस्वरूप दाहिने तरफ के गैंगवे की बहाली होती। इसलिए अधिकारियों को भी आठ सीटों वाले डिब्बे को हटाकर दाहिने तरफ के निकास की बहाली पर जोर देना चाहिए था, जिसे वर्ष 1978 में अनुमति दी गई थी, जाहिरा तौर पर क्योंकि दाहिने तरफ के गैंगवे को उस स्थान पर अतिरिक्त सीटों द्वारा बंद कर दिया गया था, अधिकारियों ने माना कि दाहिने तरफ के निकास को जारी रखने का कोई व्यावहारिक उपयोग नहीं है। वर्ष 1979 में छूट वापस लेने के परिणामस्वरूप न केवल अतिरिक्त सीटें तय की जानी चाहिए थीं, बल्कि उसके बाद के सभी निर्णय जो उसके आधार पर आगे बढ़े थे, उन्हें भी उलट दिया जाना चाहिए था। यह समझना मुश्किल है कि कैसे पर्याप्त अनुपालन के परीक्षण को लागू करने पर भी अधिकारी थिएटर को डी. सी. आर., 1953 के अनुरूप मान सकते हैं, विशेष रूप से गैंगवे जैसे महत्वपूर्ण पहलू से संबंधित और सिनेमा हॉल से तेजी से तितर-बितर होने के लिए इतना महत्वपूर्ण है।” (17) वह उस तर्क से भी समर्थन मांगेगी जो निचली अदालत और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा नियोजित किया गया है।, तथ्य यह है कि यहाँ एक अधिकारी है जिसने अतिरिक्त सीटें देने के पहले के निर्णय को रद्द करने की अधिसूचना के आलोक में दिनांक 27.07.1979 के आदेश के तहत की गई अपनी कार्रवाई का दृढ़ता से बचाव किया, जिसका अतिरिक्त सीटों को हटाने के मामले में तार्किक परिणति तक पालन नहीं किया गया था। दूसरे शब्दों में, यहाँ एक ऐसा व्यक्ति है जिसने बिना किसी औचित्य के, सुरक्षा सुविधाओं को नियंत्रित करने वाले वैधानिक नियमों के विपरीत, जिसे अनिवार्य रूप से बनाए रखा जाना चाहिए और बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

(18) उन्होंने हाल के फैसले से समर्थन प्राप्त करने की भी मांग की

यह न्यायालय अर्थात्, शांताबेन भूराभाई भूरिया बनाम आनंद अताभाई

चौधरी और अन्य 2021 एससीसी ऑनलाइन एससी 974। वह उक्त निर्णय के बल पर इंगित करेंगी कि भले ही इस न्यायालय को लगता है कि मंजूरी के बिना, संज्ञान कमजोर हो गया है, फिर भी यह इसे उचित ठहराएगा।

एच.

686

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

मंजूरी देने का निर्देश देने वाले न्यायालय पर विचार किया जाए और दिया जाए। 17 साल बाद हुई त्रासदी को टाला जा सकता था। कारण अतिरिक्त सीटों को हटाने से इनकार करना था जिसका अर्थ है कि आग लगने और आग से होने वाली मौतों का तत्काल कारण टाला जा सकता था।

(19) श्री के. टी. एस. तुलसी, प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील, प्रस्तुत करेंगे कि अपराध का संज्ञान लिया जाता है न कि अपराधी का। मजिस्ट्रेट द्वारा वर्तमान मामले की तरह गंभीर मामले में संज्ञान लेने में कोई गलती नहीं की गई है। वे इंगित करते हैं कि 59 व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित करने वाली त्रासदी के अनुपात को न्यायालय द्वारा नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए। वह श्रीमती के तर्क को दोहराते हैं। अपराजित ने कहा कि इस मामले ने तीन न्यायालयों का ध्यान आकर्षित किया है जिसमें यह न्यायालय और अनुज्ञप्ति निकायों के अधिकारियों का दोष शामिल है जिसमें अपीलार्थी भी शामिल है और इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती है।

बी.

सी.

(20) विद्वान वरिष्ठ वकील प्रस्तुत करेंगे कि अपीलार्थी के अभिवचनों का अवलोकन उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदक की ओर से अशोभनीय आचरण को भी प्रकट करेगा। यह एक आवेदक की आवश्यकता है जो न्यायालय में आता है कि वह स्वयं को निष्पक्ष रूप से संचालित करे। वह यह बताते हुए विस्तार से बताते हैं कि एक समय पर, अपीलार्थी के पास एक मामला था कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से थिएटर का निरीक्षण किया था। यह उनकी दलील के विपरीत है जिसमें उन्होंने यह रुख अपनाया था कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से सिनेमाघरों का निरीक्षण नहीं किया है, जबकि वास्तव में, निरीक्षण दल के सदस्यों द्वारा निरीक्षण किया गया था। दूसरे शब्दों में, यहाँ एक व्यक्ति है, जो भले ही एक लोक सेवक के वस्त्र पहने हुए है, वह अपने आचरण के कारण Cr.P.C की धारा 197 के तहत प्रतिरक्षा का दावा नहीं कर सकता है। विद्वान वरिष्ठ वकील ने कहा कि जवाबी हलफनामा दायर करते समय उन्होंने जो सख्त रुख अपनाया था, उससे बदलाव समझ से परे है और इसने वैध रूप से संज्ञान लेने को आमंत्रित किया है। दूसरे शब्दों में, अपीलार्थी द्वारा विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए कोई मामला नहीं बनाया गया है।

डी.

ई.

एफ.

विश्लेषण

(21) इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि अपीलार्थी एक लोक सेवक था। विचाराधीन अवधि जब उनका थिएटर से संबंध था, उसे 1979-1980 के रूप में देखा जा सकता है। हम पहले ही निर्विवाद रूप से उन घटनाओं की श्रृंखला का संकेत दे चुके हैं जो सामने आई और जिसकी उत्पत्ति उपराज्यपाल द्वारा 1976 में अधिसूचना जारी करना है। सीटों की संख्या बढ़ाने की अनुमति दी गई। अपीलार्थी का इससे कोई लेना-देना नहीं था। निर्णय के आधार पर सीटों में वृद्धि की गई।

जी.

एच.

687

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

ए.

पुनः अपीलार्थी उस समय घटनास्थल के पास कहीं नहीं था। अपीलार्थी ने 02.02.1979 पर पदभार संभाला। 27.07.1979 पर, 13.09.1976 पर जारी पहले की अधिसूचना को रद्द करते हुए एक अधिसूचना जारी की गई। पूर्व अधिसूचना को निरस्त करने वाली उक्त अधिसूचना का सख्ती से पालन करते हुए, अपीलार्थी ने 28.07.1979 दिनांकित आदेश जारी किया। पिछली अधिसूचना को रद्द करने वाली बाद की अधिसूचना और अपीलार्थी की कार्रवाई पर दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष आपत्ति जताई गई। एक अंतरिम आदेश का पालन किया गया। अपीलार्थी ने कार्रवाई का बचाव किया जैसा कि एक आधिकारिक प्रत्यर्थी के रूप में उससे उम्मीद की गई थी। इसके बाद उच्च न्यायालय ने अपना फैसला सुनाया। उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित निर्णय दिया:

बी.

(22) उच्च न्यायालय ने पाया कि नियम 3 (3) के परंतुक के तहत दी गई छूट को संशोधित या निरस्त किया जा सकता है और इन परिस्थितियों में, छूट को रद्द करना उचित और कानूनी था।

सी.

(23) इसके बाद न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार निर्णय दिया: “प्रस्ताव संख्या 3:

डी.

यह पहले ही स्पष्ट कर दिया गया है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य और आग के खतरे के पहलुओं पर विचार करने के बाद छूट दी गई थी। यह भी स्पष्ट है कि यह तथ्य कि इन मुख्य विचारों को ध्यान में रखते हुए छूट नहीं दी जा सकती थी, यह दर्शाता है कि नियमों के भीतर इन सिनेमाघरों में बैठने की

जगह के विस्तार के लिए कुछ नियम थे, हालांकि कुछ अतिरिक्त सीटों का प्रावधान शायद कुछ हद तक नियमों के विपरीत रहा होगा। हमारे लिए इस सवाल पर अटकलें लगाने की जरूरत नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि छूट को रद्द करने का परिणाम केवल छूट को वापस लेना है। इसका स्वतः यह अर्थ नहीं है कि सिनेमाघरों में स्थापित सभी अतिरिक्त सीटें नियमों के विपरीत थीं और इसलिए, इस बात पर विचार किए बिना कि इनमें से कितनी सीटें नियमों के अनुरूप थीं और उनमें से कितनी सीटें नियमों के विपरीत थीं, उन्हें हटा दिया जाना चाहिए।

ई.

एफ.

जी.

इसलिए, प्रस्ताव संख्या 3 पर हमारा निष्कर्ष यह है कि प्रशासन अतिरिक्त सीटों पर अपना दिमाग लगाएगा ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि उनमें से किस ने किस नियम का और किस हद तक उल्लंघन किया है। वे इस बात को ध्यान में रखेंगे कि नियमों का अनुपालन पर्याप्त होना चाहिए और कठोर और कठोर नहीं होना चाहिए।

एच.

688

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

अधिनियम द्वारा प्रस्तुत इन दिशानिर्देशों के साथ, वे यह निर्धारित करेंगे कि कौन सी अतिरिक्त सीटें नियमों का उल्लंघन करती हैं और केवल ऐसी सीटों के संबंध में उनके पास ऐसी सीटों को हटाने का आदेश देने की शक्ति होगी।”

“प्रस्ताव 4

बी.

यह विवादित नहीं है कि कुछ सिनेमा थिएटर 1953 के नियमों की घोषणा से पहले मौजूद थे। सलाह दी जाती है कि नियम 3 (3) इन थिएटरों और अन्य थिएटरों के बीच अंतर करता है जो इन नियमों की घोषणा के बाद अस्तित्व में आए हैं। नियम 3 (3) के शुरुआती शब्दों से यह प्रतीत होता है कि नियम 3 (2) के अनुपालन के बिना इमारतों की प्रदर्शनी के लिए 1953 से पहले से ही लाइसेंस प्राप्त थिएटरों के संबंध में लाइसेंस दिए जा सकते हैं या उनकी समीक्षा की जा सकती है। यह उन शब्दों का प्रभाव है “पूर्ववर्ती उप-नियम में कुछ भी होने के बावजूद” जिसके साथ नियम 3 (3) शुरू होता है। पूर्ववर्ती उप-नियम नियम 3 (2) है जो इस बात पर जोर देता है कि सिनेमाटोग्राफ प्रदर्शनी के लिए स्थायी रूप से सुसज्जित भवन को लाइसेंस देने से पहले नियमों की पहली अनुसूची में

निर्धारित आवश्यकताओं को पूरा करना होगा। इन दो प्रकार की इमारतों से निपटने में प्रशासन निश्चित रूप से इस अंतर को ध्यान में रखेगा। यह धारा 12 (1) (ए) और 17 में पहले से ही निर्धारित आवश्यकता के अनुसार भी होगा कि नियमों का अनुपालन पर्याप्त होना चाहिए और कठोर या कठोर नहीं होना चाहिए।”

सी.

डी.

ई.

(24) न्यायालय ने पाया कि सुनवाई का अवसर देना केवल एक औपचारिकता होगी, लेकिन न्यायालय आगे नोट करता है कि अपीलार्थी को रद्द करने से पहले रिट याचिकाकर्ताओं को सुनवाई देने में अच्छी तरह से सलाह दी जाएगी। यह आवश्यक होगा, क्योंकि यह सवाल, कि कितनी अतिरिक्त सीटों ने नियमों का काफी हद तक पालन किया और वर्तमान में कितने ने नियमों का उल्लंघन किया है, निर्धारित नहीं किया गया है और बाद में प्रशासक द्वारा निर्धारित किया जाना है।

एफ.

“मुख्य आदेश लाइसेंसों की मुद्रा के दौरान पारित किया गया है। लेकिन यह अपरिहार्य है। ऊपर की गई टिप्पणियों के आलोक में, इस आधार पर कि वे नियमों का पर्याप्त रूप से पालन नहीं करते हैं, भविष्य में प्रशासन द्वारा प्रश्न पर अपना दिमाग लगाने के बाद सीटों को हटा दिया जाएगा।

जी.

एच.

689

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

ए.

यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि यह कब होगा। इसलिए यह सुनिश्चित करना संभव नहीं है कि बैठने की व्यवस्था में कोई भी बदलाव प्रशासन द्वारा किसी विशेष लाइसेंस अवधि के अंत में ही लागू किया जाएगा।

उपरोक्त कारणों से, रिट याचिकाओं का निपटारा ऊपर दिए गए निष्कर्षों के आलोक में और मौजूदा अतिरिक्त सीटों के बारे में टिप्पणियों के प्रकाश में और प्रशासन द्वारा गुण-दोष पर प्रश्नों की जांच करने और कदम उठाने के बाद भविष्य में उनमें किए जाने वाले परिवर्तनों के बारे में किया जाता है। कोई लागत नहीं। अनुज्ञप्तिधारियों के भवनों में से प्रत्येक में प्रशासन द्वारा निर्दिष्ट अतिरिक्त सीटों या उनमें से किसी के द्वारा नियमों के पर्याप्त अनुपालन के बारे में प्रशासन द्वारा निर्धारण किए जाने तक, दिनांकित अंतरिम आदेश इस सीमा के अधीन लागू रहेगा कि यदि प्रशासन द्वारा एक महीने के

भीतर प्रत्येक भवन के संबंध में कोई निर्धारण नहीं किया जाता है, तो वे अनुज्ञप्ति जिनके भवनों के संबंध में निर्धारण नहीं किया जाता है, वे अपने भवन में अतिरिक्त सीटों के लिए टिकट बेचने के लिए स्वतंत्र होंगे।”

बी.

सी.

डी.

(25) इसके बाद, यह है कि 06.12.1979 पर, अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के आदेश के कथित अनुपालन में उपहार सिनेमा के लाइसेंसधारी को कारण दर्शाएँ नोटिस जारी करने के लिए आगे बढ़े। वास्तव में एक समिति का गठन किया गया था जैसा कि हमने पहले देखा था। अंत में समिति की सिफारिशों के आधार पर कार्रवाई करने के उद्देश्य से, अपीलार्थी ने बालकनी से अतिरिक्त छह सीटों को हटाने का आदेश दिया। 56 थिएटर के दूसरे हिस्से से सीटों को हटाने का निर्देश दिया गया था। कुल 62 अतिरिक्त सीटों को हटाने का आदेश दिया गया। जैसा कि हमने देखा है, दुर्भाग्यपूर्ण आग लगभग 17 साल बाद लगी। (26) दोनों न्यायालयों ने अपीलार्थी द्वारा अपने जवाबी हलफनामे में लिए गए रुख से काफी समर्थन प्राप्त किया है। अपीलार्थी के अनुसार, लिया गया रुख उस अधिसूचना को ध्यान में रखते हुए था जो पहले की अधिसूचना और उसके नोटिस को रद्द करते हुए जारी की गई थी। यह अपीलार्थी का आगे का मामला है कि न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि उसकी दलीलें जो भी हों, इस मामले पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया और निर्णय का पालन किया गया और अपीलार्थी उसके अनुरूप कार्य करने के लिए विधिवत बाध्य था। विशेष रूप से, विवाद यह है, क्योंकि जिस पर विचार किया गया था, वह यह था कि पर्याप्त अनुपालन होना चाहिए, इसका तात्पर्य यह था कि अतिरिक्त सीटों को जारी रखा जा सकता है।

ई.

एफ.

जी.

एच.

690

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

(27) यह सच हो सकता है कि लगभग 17 साल बाद हुई दुर्भाग्यपूर्ण त्रासदी के बाद, अपीलार्थी और समिति के सदस्यों की कार्रवाई से खामियों को उजागर कर दिया गया था। हम यह इस कारण से कहते हैं कि, जैसा कि सी. बी. आई. की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील ने बताया है, इस पहलू

को सुशील अंसल 1 में रिपोर्ट किए गए फैसले में इस न्यायालय के हाथों अभिव्यक्ति मिली है। दूसरे शब्दों में, हो सकता है कि इस न्यायालय द्वारा भी चूक पाई गई हो। हम, इस मामले में, Cr.P.C की धारा 197 के अर्थ के भीतर कोई मंजूरी नहीं होने के प्रभाव के आधार पर अपीलार्थी के तर्क से निपटने तक सीमित हैं। जब हम मंजूरी के अभाव में संज्ञान लेने के सवाल पर विचार करते हैं और इस तरह Cr.P.C की धारा 197 का उल्लंघन किया जा रहा है, तो इसे इस सवाल के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए कि क्या कोई अपराध किया गया है। Cr.P.C की धारा 197 के पीछे का हितकारी उद्देश्य लोक सेवकों को सुरक्षा प्रदान करना है।

बी.

सी.

(28) राज्य अपने अधिकारियों के माध्यम से कार्य करता है। राज्य के कार्य संप्रभु हो सकते हैं या संप्रभु नहीं हो सकते हैं। लेकिन प्रत्येक लोक सेवक द्वारा किए जाने वाले कार्यों में से प्रत्येक का उद्देश्य सार्वजनिक भलाई प्राप्त करना है। यह विवेक के साथ आ सकता है। शक्ति के प्रयोग को उस संदर्भ से अलग नहीं किया जा सकता है जिसमें और जिस समय शक्ति का प्रयोग किया जाता है या यदि यह एक चूक का मामला है, जब चूक होती है।

डी.

ई.

(29) सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जो न्यायालय द्वारा इस तर्क पर विचार करते समय उठाया और उत्तर दिया जाना चाहिए कि मंजूरी आने वाली नहीं है, वह यह है कि क्या अधिकारी अपने आधिकारिक कर्तव्यों का पालन कर रहा था। यह आगे बढ़ता है। यहां तक कि एक अधिकारी जो अपनी आधिकारिक शक्ति के कथित प्रयोग में कार्य करता है, उसे भी आई. डी. 1 की धारा 197 के तहत सुरक्षा दी जाती है। यह अच्छे कारण के लिए है कि जब अधिकारी अपनी शक्ति का प्रयोग करता है तो वह निडरता से उसी तरह का प्रयोग कर सकता है, जिसमें कोई संदेह नहीं है कि सार्वजनिक पदाधिकारी केवल ईमानदारी से कार्य कर सकते हैं। वास्तव में, कार्रवाई के प्रामाणिक होने की आवश्यकता को आई. डी. 1 की धारा 197 में स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है, हालांकि यह कई अन्य कानूनों में पाया गया है जो लोक सेवकों को उनके खिलाफ कार्रवाई, दीवानी और आपराधिक से बचाते हैं। (30) एक बार जब हम इस मूल सिद्धांत को ध्यान में रखते हैं और अपीलार्थी की ओर से कार्रवाई या चूक का निर्णय लेते हैं, तो हम सोचेंगे कि यह नहीं पाया जा सकता है कि स्वीकार किए गए तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी

एफ.

जी.

1 सुशील अंसल बनाम राज्य, सी. बी. आई. 2014 (6) एस. सी. सी. 173 ए.

एच.

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

अपने आधिकारिक कार्यों के निर्वहन में कार्य नहीं कर रहे थे। यह सब उनकी निगरानी में हुआ, जो उनके नोटिस से शुरू हुआ, जो उन्होंने 28.07.1979 पर जारी किया था, जवाबी हलफनामे के लिए जो उन्होंने रिट याचिकाओं में दायर किया था, बाद में कारण बताएं नोटिस जो उन्होंने जारी किया था, और उसके बाद, अंत में 24.12.1979 पर, जिसमें उन्होंने कुल 62 अतिरिक्त सीटों को हटाने का निर्देश दिया था, ये सभी कार्य उनके आधिकारिक कर्तव्यों का पालन करते हुए किए गए थे। जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, भले ही इसे अपने आधिकारिक कर्तव्यों के कथित प्रयोग के रूप में माना जाए, फिर भी वह बिना मंजूरी के अभियोजन से सुरक्षित रहेगा। इसे इस सवाल के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए कि क्या अपीलार्थी ने कोई ऐसा अपराध किया था जिसके लिए मजिस्ट्रेट द्वारा समन जारी करने और उच्च न्यायालय द्वारा इसे बरकरार रखते हुए उसे अभ्यारोपित किया गया था। यह तथ्य कि अपीलार्थी ने जवाबी हलफनामे में एक निश्चित रुख अपनाया था, एक समिति की सिफारिशों पर कार्य करने के अपने बाद के कार्य को एक ऐसा कार्य नहीं बनाएगा जो उसके आधिकारिक कार्यों के निर्वहन में नहीं है। इस न्यायालय के निष्कर्ष, जिनका हमने निर्णय (उपर्युक्त) में उल्लेख किया है, उनका अर्थ यह नहीं होगा कि यदि वे अपीलार्थी सहित व्यक्तियों द्वारा किए गए अपराध हैं, तो उन्हें Cr.P.C की धारा 197 के अर्थ के भीतर मंजूरी की आवश्यकता नहीं होगी। इस प्रश्न के बीच सूक्ष्म और सूक्ष्म अंतर कि क्या अपराध किया गया है और यदि कोई अपराध किया गया है, तो क्या एक लोक सेवक पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी की आवश्यकता है, जिसके बारे में आरोप लगाया गया है कि उसने ऐसा किया है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान मजिस्ट्रेट और उच्च न्यायालय ने इस भेद की अनदेखी की है। हम देखते हैं कि, वास्तव में, मंजूरी की कानूनी आवश्यकता के बारे में सचेत होने के कारण, पहले प्रत्यर्थी ने उपयुक्त सरकार से मंजूरी मांगी थी और एक रिट याचिका भी दायर की गई थी।, 6238/2011 मामले में उचित कदम उठाने के निर्देश देने के लिए। हम आगे यह देखते हैं कि धारा 482 के तहत याचिका के लंबित होने के कारण उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई थी।

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

(31) एक आधार जिसे अपीलार्थी के खिलाफ उच्च न्यायालय का पक्ष मिला है, वह यह है कि अपीलार्थी, उच्च न्यायालय के अनुसार, मजिस्ट्रेट के समक्ष इस मुद्दे को उठा सकता है।

यहाँ हम एक पहलू देख सकते हैं। जब यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई कार्य या चूक जो कानून में अपराध है, एक लोक सेवक द्वारा आधिकारिक कार्यों के निर्वहन में किया गया है और मामला धुंध में है और यह स्पष्ट नहीं है कि क्या कार्य उसके आधिकारिक कार्यों के निर्वहन के लिए पता लगाने योग्य है, तो न्यायालय किसी दिए गए मामले में कार्यवाही को स्थगित कर सकता है और कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति दे सकता है। सामग्री पहले रखी जाएगी।

जी.

एच.

692

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

न्यायालय जो स्थिति स्पष्ट करेगा और प्रश्न पर विलंबित निर्णय उचित हो सकता है। तथापि, ऐसे मामले में जहां लोक सेवक द्वारा आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के लिए कार्य या चूक निर्विवाद रूप से पता लगाने योग्य है, तब न्यायालय द्वारा संज्ञान लिए जाने के खिलाफ आपत्ति को स्वीकार नहीं करने से स्पष्ट रूप से हितकारी उद्देश्य विफल हो जाएगा जो Cr.P.C की धारा 197 के अंतर्गत आता है। यह सब तथ्यों पर निर्भर करता है और इसलिए, मामले-दर-मामले के आधार पर निर्णय लेना होगा।

बी.

(32) हम देखते हैं कि विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर. बसंत ने एम. सी. डी. बनाम उपहार त्रासदी पीड़ित संघ मामले में इस न्यायालय के फैसले की ओर हमारा ध्यान आकर्षित विद्वान । (2011) 14 एस. सी. सी. 481 यह तर्क देने के लिए कि इस न्यायालय ने देयता के अनुज्ञप्ति प्राधिकरण को दोषमुक्त कर दिया है:

सी.

“54. इस न्यायालय के निर्णयों के साथ-साथ अंग्रेजी और कनाडाई न्यायालयों के निर्णयों से यह स्पष्ट है कि सार्वजनिक प्राधिकरणों के खिलाफ केवल इसलिए हर्जाना देना उचित नहीं है क्योंकि उनके वैधानिक कर्तव्यों के पालन में कुछ निष्क्रियता रही है या क्योंकि उनके द्वारा की गई कार्रवाई अंततः कानून के अधिकार के बिना पाई गई है। वैधानिक कार्यों और कर्तव्यों के निष्पादन के संबंध में, अदालतें तब तक हर्जाना नहीं देंगी जब तक कि द्वेष या सचेत दुरुपयोग न हो। जिन मामलों में वैधानिक प्राधिकरण की ओर से प्रत्यक्ष लापरवाही के लिए हर्जाना दिया गया है या सख्त दायित्व के सिद्धांत से जुड़े मामलों में एम. सी. डी. या लाइसेंस प्राधिकरण के खिलाफ दायित्व को तेज करने के लिए इस मामले में भरोसा नहीं किया जा सकता है। डी. वी. बी. की स्थिति अलग है, क्योंकि इसकी ओर से प्रत्यक्ष लापरवाही स्थापित की गई थी और यह पीड़ितों की चोटों और मौत

का एक निकटवर्ती कारण था। यह कहा जा सकता है कि जहां तक लाइसेंसधारी और डी. वी. बी. का संबंध है, अंशदायी लापरवाही थी।

डी.

ई.

एफ.

55. अनुज्ञप्ति प्राधिकरण और एम. सी. डी. की स्थिति अलग है। वे सिनेमा थिएटर के मालिक नहीं थे। आग लगने का कारण उनके द्वारा या उनके द्वारा किए गए किसी भी कार्य को नहीं बताया गया था। उनके कार्य/चूक मौतों और चोटों का निकटतम कारण नहीं थे। अनुज्ञप्ति प्राधिकरण और एम. सी. डी. केवल अपने वैधानिक कार्यों का निर्वहन कर रहे थे (जो कि अनुज्ञप्ति प्राधिकरण के मामले में अनुज्ञप्ति प्रदान करना और निरीक्षण रिपोर्ट प्रस्तुत करना या एम. सी. डी. द्वारा एन. ओ. सी. जारी करना है)। ऐसी परिस्थितियों में, केवल इस आधार पर कि लाइसेंस प्राधिकरण और एम. सी. डी. अपने कर्तव्यों का बेहतर या अधिक कुशलता से पालन कर सकते थे, उन्हें त्रासदी के पीड़ितों को मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है।

जी.

एच.

693

आमोद कुमार कांत बनाम उत्तर त्रासदी और ए. एन. आर. की जीत का संगठन।

ए.

एक तरफ लाइसेंस प्राधिकरण और एम. सी. डी. के कार्यों और आग दुर्घटना और पीड़ितों की मृत्यु/चोटों के लिए कोई निकटता या प्रत्यक्ष निकटता नहीं है। लेकिन एक तरफ लाइसेंसधारी और डी. वी. बी. के कार्यों और आग दुर्घटना के परिणामस्वरूप पीड़ितों की मौतों/चोटों के बीच निकटता और प्रत्यक्ष निकटता थी। सार्वजनिक विधि दायित्व के संबंध में सुव्यवस्थित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, सार्वजनिक प्राधिकरणों द्वारा वैधानिक कर्तव्यों के निर्वहन के संबंध में, जिसमें दुर्भावना या दुरुपयोग शामिल नहीं है, उच्च न्यायालय ने लाइसेंस प्राधिकरण और एम. सी. डी. को पीड़ितों को संयुक्त रूप से और अलग-अलग रूप से लाइसेंसधारी और डी. वी. बी. के साथ मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी बनाने में गंभीर त्रुटि की।

बी.

सी.

56. हम यह स्पष्ट करते हैं कि दोषमुक्ति केवल पीड़ितों के लिए मौद्रिक दायित्व के संबंध में है। हम उच्च न्यायालय की इन टिप्पणियों से असहमत नहीं हैं कि लाइसेंस प्राधिकरण और एम. सी. डी. द्वारा (अपने सीमित क्षेत्र में) कर्तव्यों का निष्पादन यांत्रिक, आकस्मिक और अभावपूर्ण था। इन

अधिकारियों की ओर से उनके सामने आने वाली फाइलों से निपटने की प्रवृत्ति है क्योंकि उन्हें निपटाने के लिए केवल कागजी कार्रवाई की आवश्यकता होती है। वे कानून या नियमों के उद्देश्य को पहचानने में विफल रहते हैं, यही कारण है कि उन्हें कुछ कार्य करने की आवश्यकता होती है और उनके पास आने वाले आवेदन/अनुरोधों के दिमाग का उपयोग न करने या यांत्रिक निपटान के परिणाम। जैसा कि नरेश कुमार की रिपोर्ट में सही देखा गया है, सुरक्षा संस्कृति की कमी और प्रदर्शन में सुधार करने की इच्छाशक्ति की कमी है। प्रक्रिया और नियमों का अनुपालन यांत्रिक है। हम अनुज्ञप्ति प्राधिकरण द्वारा और एम. सी. डी. द्वारा सीमित सीमा तक अपने कार्यों और कर्तव्यों के निष्पादन में कमी के संबंध में उच्च न्यायालय की टिप्पणियों की पुष्टि करते हैं। लेकिन इससे मौद्रिक दायित्व नहीं बनता है।”

डी.

ई.

एफ.

(33) वह उसी के बल पर तर्क देगा कि इस न्यायालय ने पाया है कि अपीलार्थी क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी नहीं था। यह न्यायालय मौद्रिक दायित्व से निपट रहा था।

(34) हालाँकि कार्रवाई करने का अपीलार्थी का अंतिम निर्णय जैसा कि उसने दिनांक 1 की कार्यवाही द्वारा किया था, उसके जवाबी हलफनामे की सामग्री के विपरीत था, यह अपने आप में मंजूरी की आवश्यकता को कम नहीं कर सकता है, यहां तक कि इस आधार पर भी आगे बढ़ सकता है कि अपीलार्थी पर उन अपराधों का आरोप लगाया जा सकता है जो मजिस्ट्रेट के पक्ष में थे।

जी.

उपरोक्त चर्चा का परिणाम यह है कि हम पाते हैं कि मजिस्ट्रेट ने उनके खिलाफ संज्ञान लेने में इस मामले के तथ्यों में गलती की है।

एच.

694

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 6 एस सी आर।

ए.

Cr.P.C की धारा 197 के अधिदेश के विपरीत अपीलार्थी । केवल उसी संक्षिप्त आधार पर, अपीलार्थी सफल होता है। अपील की अनुमति है। विवादित आदेश अपास्त करना जाएगा। धारा 482 में चुनौती दी गई कार्यवाही रद्द कर दी जाएगी। हालाँकि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि यह सक्षम प्राधिकारी के मामले में निर्णय लेने और/या कानून के अनुसार अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी देने के रास्ते में खड़ा नहीं होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी कोई

मंजूरी नहीं होने के पहलू पर सफल होता है, हम उन दो अन्य दलीलों पर उच्चारण करना आवश्यक नहीं समझते हैं जिन्हें अपीलार्थी द्वारा हमारे सामने दबाया गया है।

बी.

सी.

दिव्या पांडे

अपील की अनुमति दी गई।

(सहायक: शेवाली मोंगा, एलसीआरए)

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.